**ओ३म्**

**‘विविधता में एकता का सिद्धान्त क्या उचित है?’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

भारत अनेक मत-मतान्तरों, बहुभाषाओं, भिन्न-भिन्न रहन-सहन व परम्पराओं वाला देश है। एक ही मत में अनेक शाखायें भी हैं जिनमें विचारधारा की दृष्टि से मामूली भिन्नतायें हैं परन्तु सबके अनुयायी पृथक पृथक अपने ही गुरु व मत के आचार्य के प्रति ही श्रद्धा रखते और अन्यों में अपने गुरु व मत का ही प्रचार करते व उनका एक प्रकार का मतान्तरण-धर्मान्तरण सा करते हैं। हमने पढ़ा व सुना है कि ईश्वर एक है और सत्य ही एकमात्र धर्म है अर्थात् **God is one and Truth is the only Relegion (Dharma).** यदि किसी समाज में भिन्न-भिन्न मत को मानने वाले, भिन्न भिन्न भाषाओं को बोलने वाले, नाना प्रकार की अच्छी-बुरी नाना प्रकार की वेश-भूषा पहनने वाले, अनेकानेक व्रतोपवास तथा धार्मिक कर्मकाण्ड करने वाले लोग होंगे तो क्या वह समाज सशक्त व बलवान होगा? इस प्रश्न के उत्तर के लिए हमें एक ऐसे समाज की कल्पना भी करनी होगी जो जनसंख्या में समान ऐसे लोगों का समाज व देश हो जहां कोई अज्ञान, अन्धविश्वास न हो, सभी एक मत के अनुयायी हो और जो पूर्ण सत्य पर आधारित हो, सभी को सत्य व असत्य की चर्चा करने की स्वतन्त्रता हो, सभी एक ही उन्नत भाषा बोलते हो या जिनकी मुख्य एक भाषा हो जिसको सब जानते हों व सहर्ष उसका प्रयोग करते हों तथा लेखन मे भी उसी मुख्य भाषा का प्रयोग होता हो। पुरुष व स्त्रियों की वेशभूषा भी वहां के ऊंचे विचारों के वृद्ध लोगों ने निश्चित की हो, जिसमें सबकी भावनाओं व समाज के हित का ध्यान रखा गया हो तथा जिसका सभी पालन भी करते हों, कहीं किसी प्रकार का आन्तरिक संघर्ष व विरोध समाज व देश में न हो, समाज में कोई दलित न हो और न किसी के प्रति किसी प्रकार का भेदभाव उस समाज में विद्यमान न हो। अब यदि दोनों समाजों की परस्पर तुलना करें तो यह निर्विवाद रूप से सिद्ध होगा कि एक समान विचारधारा, एकभाषा, लगभग एक समान वेशभूषा वाला देश अधिक शक्तिशाली व उन्नत होगा। यदि ऐसा है तो सभी देशों को इस दिशा में अग्रसर क्यों नहीं होना चाहिये? इसका कोई कारण दिखाई नहीं देता।

 महर्षि दयानन्द (1825-1883) ने अपने जीवन का बहुत बड़ा भाग भारत में प्रचलित सभी देशी व विदेशी मत-मतान्तरों वा धर्मों के अध्ययन में लगाया। उनका निष्कर्ष था कि सत्य एक है इसीलिए सभी मनुष्यों का धर्म भी एक सत्य धर्म वा वैदिक धर्म है। वैदिक धर्म पूर्ण सत्य पर आधारित है और शाश्वत वा सनातन है। उन्होंने पाया कि जितने भी मत व मतान्तर हैं उन सबमें कुछ समान बातें है और कुछ मान्यतायें व परम्परायें एक दूसरे से कुछ कुछ भिन्न हैं जिनमें धार्मिक मान्यताओं में परस्पर भिन्नता व विरोध का कारण अज्ञानता है। ऋषि दयानन्द जी ने अपनी सभी धार्मिक मान्यताओं को सत्य की कसौटी, तर्क व युक्ति पर, कस कर उनके प्रमाणित होने पर ही स्वीकार किया। सभी मतों वा धर्मों के ग्रन्थों का अध्ययन करने पर वह इस निष्कर्ष पर पहुंचे की पूर्ण सत्य केवल वेदों में ही है जिसका यथार्थ अर्थ ही मनुष्य मात्र के लिए कल्याणकारी है। अन्य मतों में अनेक बातें हैं जो युक्ति व तर्क की कसौटी व समानता के सामाजिक नियमों में सत्य सिद्ध नहीं होतीं। ऐसी मान्यताओं का सुधार व संशोधन करना मानवमात्र के हित के लिए सभी मतों के आचार्यों का कर्तव्य है। उन्होंने सत्य धर्म का प्रचार कर सभी मतों, जिसमें उनके अपने माता-पिता का मत भी था, समीक्षा करने पर उन्हें अज्ञानतापूर्ण व अन्धविश्वासों से पूरित पाया जिस कारण उन्होंने उसकी व अन्यों की सत्य व ज्ञान की कसौटी पर कस कर आलोचना व समालोचना भी की। उनके इस कार्य का हेतु यह था कि लोग सत्य व असत्य को जान सकें और सत्य को ग्रहण व असत्य का त्याग कर सकें। महर्षि दयानन्द की अमर कृति सत्यार्थप्रकाश पुस्तक इसी सत्य व असत्य मान्यताओं का प्रकाश करने के उद्देश्य से लिखी व प्रचारित की गई है। आज महर्षि दयानन्द जी की कृपा से हमारे सम्मुख ईश्वर, जीवात्मा, प्रकृति व सृष्टि, जन्म-मरण-पुनर्जन्म-परजन्म, कर्म-फल सिद्धान्त, सच्ची ईश्वर उपासना व उससे होने वाले लाभ, यज्ञ व अग्निहोत्र का सत्य स्वरूप व उससे मनुष्य एवं प्राणीमात्र को होने वाले लाभ सहित सामाजिक समानता व मनुष्यों को श्रेष्ठ बनाने के लिए किए जाने वाले संस्कारों की पूरी जानकारी उपलब्ध है। महर्षि दयानन्द के अनुसार संसार के सभी मनुष्यों को ईश्वर, जीवात्मा व प्रकृति के सत्य स्वरूप को जानना चाहिये और उस सत्य ज्ञान को ही मानना व उसका ही आचरण करना चाहिये। भारत के लोगों को हिन्दी अनिवार्य रूप से जाननी चाहिये, अन्य स्वदेशीय व कुछ विदेशी भाषाओं को अपनी अपनी योग्यता के अनुसार जानें व परस्पर व्यवहार में मुख्यतः हिन्दी का ही प्रयोग करें तो इससे देश की एकता को बल मिलेगा। सभी की वेशभूषा सादगी पूर्ण होनी चाहिये। अनावश्यक फैशन व शरीर को महत्व देना और ईश्वर व आत्मा की उपेक्षा करने वाली जीवन पद्धति को वह मान्यता नहीं देते। यह सभी बातें मनुष्य को इस जन्म व परजन्म में वास्तविक सुख व मोक्षानन्द से दूर करती हैं व बन्धनों में फंसा कर मनुष्य को दुख में डूबा देती हैं जो अच्छे भविष्य का सूचक नहीं है। ईश्वर की उपासना भी योगाभ्यास की विधि से ही सबको करनी चाहिये और वायु व वर्षा-जल की शुद्धि के लिए सभी गृहस्थियों को नित्य प्रातः व सायं यज्ञ वा अग्निहोत्र भी करना चाहिये जिससे ईश्वर मनुष्य द्वारा सन्ध्या, यज्ञ, परोकार आदि शुभ कर्मों के अनुसार उसे प्रभूत सुख, शान्ति व समृद्धि प्रदान करे।

 देश व समाज में अधिक विविधता का कारण अज्ञान व असत्य से युक्त जीवन व व्यवहार है। इस कारण विविधता में एकता का सिद्धान्त भी हमारी दृष्टि में पूरी तरह से देश व समाज के हित में नहीं है अपितु विविधता के कारणों को दूर कर उनमें समानता, एकता व एकरसता स्थपित करने का प्रयास किया जाना चाहिये। विज्ञान की तरह ही धर्म के क्षेत्र में भी सत्य को प्रतिष्ठित किया जाना चाहिये। यह सृष्टि की आदि में ईश्वर प्रदत्त वेदों के ज्ञान का निष्कर्ष होने के साथ ही युक्ति व तर्क से सिद्ध है। यदि हम धार्मिक व सामाजिक विषयों में सत्य को स्वीकार कर उसकी वृद्धि, प्रचार व प्रसार नहीं करगें तो भविष्य के बारे में कुछ कहा नहीं जा सकता। हमने भारत का विभाजन धर्म व भाषा के आधार पर ही, अर्थात् विविधता के कारण, होते देखा है। एक सत्य मत व उन्नत सरल व सुबोध भाषा मनुष्यों को परस्पर निकट लाते हैं और भिन्न मत व भिन्न-भिन्न भाषायें जिन्हें सभी लोग न समझते हों, एक ही देश के लोगों में दूरी भी पैदा करते हैं। अतः हमें खुले मस्तिष्क से सत्य, तर्क, युक्ति व वेदज्ञान को कसौटी बनाकर सत्य की परीक्षा कर ही अपने जीवन व उसके उद्देश्यों को पूरा करने हेतु सर्वश्रेष्ठ विचारधारा को अपनाना चाहये और दूसरे विरोधी मतों की मंशा व उद्देश्यों को जो धर्मान्तरण व जनसंख्या की वृद्धि कर देश का स्वरूप बिगाड़ना चाहते हैं, उनसे सतर्क भी रहना चाहिये। हमें लगता है कि सत्य सबसे अधिक बलवान होता है। सत्य अपराजेय रहता है। अतः सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करना चाहिये और इसके साथ ही हमें अविद्या व अज्ञान का नाश करने के साथ विद्या की उन्नति करने में प्रयत्नशील रहना चाहिये। ऐसा कर ही समाज में विविधता समाप्त होकर एकात्मकता व समरसता का प्रचार हो सकता है जिससे देश सबल, अटूट व उन्नत बन सकता है। हमने महर्षि दयानन्द की विचारधारा का अध्ययन कर उसे सत्य जाना है। वेदों के सिद्धान्तों पर आधारित यह विचारधारा सारे संसार का कल्याण करने वाली सिद्ध होती है। ईश्वर, जीवात्मा एवं सभी विषयों के सत्यस्वरूप का ज्ञान वेदों व वैदिक विचारधारा के अध्ययन से ही सुलभ होता है। अतः इसका अध्ययन कर सभी लोगों को सत्य को अपनाना चाहिये और मिथ्या का त्याग करना चाहिये। लेख की समाप्ति पर महर्षि दयानन्द के सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका में दिए निम्न विचार प्रस्तुत हैं।

महर्षि लिखते हैं कि **‘मेरा इस (सत्यार्थप्रकाश) ग्रन्थ को बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य-सत्य अर्थ का प्रकाश करना है। अथात् जो सत्य है उस को सत्य और जो मिथ्या है उस को मिथ्या ही प्रतिपादन करना सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है। वह सत्य नहीं कहाता जो सत्य के स्थान में असत्य और असत्य के स्थान में सत्य का प्रकाश किया जाये। किन्तु जो पदार्थ जैसा है उसको वैसा ही कहना, लिखना और मानना सत्य कहाता है। जो मनुष्य पक्षपाती होता है वह अपने असत्य को भी सत्य और दूसरे विरोधी मतवाले के सत्य को भी असत्य सिद्ध करने में प्रवृत होता है, इसलिए वह सत्य मत को प्राप्त नहीं हो सकता। इसीलिए विद्वान आप्तों (वेदों के विद्वान व सिद्ध योगियों जिनको धर्म का निभ्र्रान्त ज्ञान हो) का यही मुख्य काम है कि उपदेश वा लेख द्वारा सब मुनष्यों के सामने सत्यासत्य का स्वरूप समर्पित कर दें, पश्चात वे स्वयम् अपना हिताहित समझ कर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनन्द में रहे।‘**

सभी विषयों में सत्य केवल एक होता है। अतः धार्मिक जगत् व जीवन के अन्य पक्षों में विविध मान्यताओं, विचारधाराओं व परम्पराओं का सिद्धान्त अप्रासंगिक एवं अप्रशस्त है। इति शम्।

 **-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**